इकाई 9 सामंतवाद का पतन और मेजी पुर्नस्थापना

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- तोकुगावा के ढांचे में बनने वाले तनावों और इन समस्याओं से निपटने में शासकों की असमर्थता की व्याख्या कर सकेंगे।
- आर्थिक विकास से बनने वाली नयी सामाजिक शक्तियों बारे में जान सकेंगे,
- उन बौद्धिक धाराओं को समझ सकेंगे जिन्होंने सामाजिक व्यवस्था के वैचारिक आधारों की जड़ें खोदीं,
- पश्चिमी साम्राज्यवादी ताकतो की घुसपैठ और इससे जापान में बनने वाले संकट के बारे में जान सकेंगे, और
- मेजी पुर्नस्थापना की प्रकृति और इसके अर्थ पर विचार-विमर्श कर सकेंगे।

9.1 प्रस्तावना

इस इकाई में **तोकुगावा** काल से मेजी काल की ओर संक्रमण पर चर्चा की गयी है। इस संक्रमण में जापान का उदय एक आधुनिक राष्ट्र-राज्य के रूप में होता है और यह एक जटिल और विवादास्पद प्रक्रिया थी।

तोकुगावा बकुफु एक लंबी और क्रमिक प्रक्रिया थी। विद्वानों ने कई प्रकार से इसकी छानबीन की है। फिर भी उनकी एक प्रमुख चिंता यह रही है कि जापान की शक्ति के स्रोतों की व्याख्या की जाये, क्योंकि एशिया के देशों में जापान ही एक ऐसा देश था जो एक आधुनिक राष्ट्र-राज्य की ओर सफलतापूर्वक संक्रमण कर सका। इस चिंता ने विद्वानों को **तोकुगावा** समाज को एक ऐसे समाज के रूप में उधृत किया जो पश्चिमी यूरोप जैसे अनुभवों से ही होकर गुजरा। यह दृष्टिकोण पहले के उन दृष्टिकोणों से बहुत भिन्न है जिसमें **तोकुगावा** काल को एक ऐसे सामंतवादी और परंपरावादी काल के रूप में खारिज कर दिया गया था जिसके दौरान अधिकांश लोग, जो खेतिहर थे, केवल जैसे-तैजे अपना भरण-पोषण ही पर पाते थे। इस तरह के दृष्टिकोण के बनने का आंशिक कारण यह था कि आधुनिकीकरण के पहले प्रवाह में प्रत्येक जापानी वस्तु को पुरानी पड़ चुकी परंपरा से जोड़ कर देखा जाता था और इस कारण से उसे त्याज्य समझा जाता था। आज विद्वानों ने **तोकुगावा** काल की एक कहीं अधिक जटिल तस्वीर बनायी है और इससे जो कुछ स्पष्ट

होता है वह यह है कि समस्याओं के बावजूद यह काल गतिशील वृद्धि और विकास का काल था। यह विकास जिस तरह का था और जैसे हुआ, उसने किसान विद्रोहों जैसे तनावों और मुसीबतों को जन्म दिया। लेकिन **तोकुगावा** के पतन के दौर में भी कुछ क्षेत्रों में रचनात्मक वृद्धि हुई। असल में इस लंबे अनुभव के बूते पर ही मेजी राज्य थोड़े ही समय में एक आधुनिक राज्य का ढांचा, बना सका, देश का उद्योगीकरण कर सका और उपनिवेशवाद के खतरे से प्रभावी ढंग से निपटा जा सका। इस अनुभव ने ही मेजी के विकास के ढंग को प्रभावित करते हुए उसके तानाशाही और विस्तारवादी चरित्र पर जोर दिया।

इस इकाई में हम **तोकुगावा** की व्यवस्था और उसके पतन के कारणों की चर्चा, पश्चिमी साम्राज्यवादियों की घुसपैठ के संदर्भ में करेंगे।

9.2 तोकुगावा का पतन

तोकुगावा व्यवस्था और उसके काम करने के ढंग के बारे में हम खंड 1 की इकाई 3 में विस्तार से चर्चा कर चुके हैं। यहां इतना दोहरा लेना उपयोगी रहेगा कि **तोकुगावा** व्यवस्था जापान देश के एकीकरण की एक लंबी प्रक्रिया के अंत में उभरी और 17वीं शताब्दी में **तोकुगावा** अपने प्रतिद्वंद्वियों को खत्म करके एक ऐसी शासन प्रणाली नियमित कर चुका था जो 1868 तक चली। ढाई सौ वर्ष से भी अधिक समय तक चलने वाली इस व्यवस्था की अपनी क्षमताएं और खामियां थी। इसकी क्षमताओं को कम करके नहीं आंका जा सकता, लेकिन यहां हम मुख्य तौर पर इसकी खामियों की ही चर्चा करेंगे।

9.2.1 सामंतवाद

सामंतवाद के मसले को भी सावधानीपूर्वक समझना आवश्यक है। **तोकुगावा** का राजनीतिक और सामाजिक ढांचा प्राचीन अर्थों में सामंतवादी नहीं था बल्कि यह एक ऐसी राजनीतिक व्यवस्था के उदय का प्रतीक था जो सत्रहवीं शताब्दी के यूरोपीय तानाशाही राजतंत्रों के कहीं अधिक निकट था। **शोगुन** (सैनिक गवर्नर) और **दाइम्यो** (समांतों) के बीच संबंध बुनियादी तौर पर असमान थे और तमाम महत्वपूर्ण मामलों में गवर्नर का अधिकार सवोच्च होता था। इस तरह **दाइम्यो** को हर दो वर्षों में एक निश्चित समय के लिए राजधानी इदों में रहना होता था और अपनी अनुपस्थिति के समय अपने परिवारों को बंधकों के रूप में छोड़कर जाना होता था। बड़े पैमाने के किसान विद्रोह जैसे संकट के काल में **हान** (सामंती जागीर) की स्वायत्तता के बावजूद शोगुन सीधे-सीधे हस्तक्षेप करता था। **तोकुगावा** ने भी **कुर्की** के जरिये या किसी **दाइम्यो** की बिना वारिस छोड़े मृत्यु की स्थिति में दाइम्यों को फिर से जमाने की व्यवस्था रखी थी जिससे वे **शोगुन** के असीमित अधिकारों को चुनौती नहीं दे सकते थे। **बकु-हान** व्यवस्था कई प्रतिबंधों और संतुलनों के साथ काम करती थी जिससे किसी भी विरोधी गुट की एकता को बनने न दिया जाये, और सर्वोच्च अधिकार इदो में **शोगुनों** के पास रहता था।

शासक **सैमुराई** कुलीनों के चरित्र में भी बहुत बदलाव आया था। हिदेयोशी ने **सैमुराई** को भूमि से अलग करने की जिस नीति की शुरुआत की थी उसके फलस्वरूप वे महली कसबों में जमा हो गये थे। **सैमुराई** की आमदनी का आंशिक स्रोत भूमि थी और आंशिक स्रोत वह वजीफा था जो उसे किसी काम के एवज में मिलता था। **सैमुराई** वर्ग का विभाजन स्तर के अंतरों के आधार पर था जिससे उनके काम की प्रकृति भी संकुचित होती थी और उनमें से कई बेकार भी थे। इस तरह नौकरीशुदा **सैमुराई** ने धीरे-धीरे एक नौकरशाही का रूप ले लिया जिसमें योग्यता और काम उन्हें जांचने का अभिन्न मापदंड बन गए। बाद में यह नौकरशाही विरासत उस तरीके के लिये काफी हद तक जिम्मेदार बनी जिसके जरिये मेजी सरकार ने आधुनिक संस्थाओं का विकास करने और नयी नीतियां लागू करने के अपने उद्देश्यों को प्राप्त किया।

9.2.2 आर्थिक बदलाव

तोकुगावा व्यवस्था के पतन की जड़े उस अंतर्विरोध में थी जो 17वीं शताब्दी में इसके बनने के समय इसके ढांचे में निहित था। यह अंतर्विरोध एक सरल कृषि अर्थव्यवस्था पर आधारित श्रेणीबद्धता के स्तरों में विभाजित समाज की कल्पना करने वाले आदर्श और एक कहीं अधिक जटिल वाणिज्यिक अर्थव्यवस्था की वास्तविकता और एक कहीं अधिक जटिल सामाजिक व्यवस्था के बीच था। शांतिपूर्ण विकास के एक लंबे दौर ने जो बदलाव किये उन्होंने ऐसी सामाजिक और बौद्धिक शक्तियों को जन्म दिया जिन्होंने **तोकुगावा** शासन के आधार पर सवाल उठाया और उसकी जड़ें खोदीं। इस व्यवस्था के सरल विचारों के आधार की ओर लौट कर इसे सुधारने के **बकुफु** के प्रयास अधिकाधिक नाकाम रहे। **तोकुगावा** के एक अधिकारी, मत्सुदाइरा सदानोबू ने 1790 में जो **कानसाई** सुधार लागू किये वे **तोकुगावा** द्वारा अपने ढहते शासन को

मजबूत करने और अपने अधिकार को फिर से व्यक्त करने के अंतिम बड़े प्रयास थे। उनकी असफलता पतन की शुरुआत थी जिसे जापान को मुक्त करने के उद्देश्य से आने वाली पश्चिमी ताकतों ने और निश्चित कर दिया। देश के अंदर की मुसीबतों ने विदेशी दबाव की उपस्थिति में और भी भीष्म रूप ले लिया और इसका परिणाम यह हुआ कि **तोकुगावा** का पतन हो गया और मेजी सरकार का उदय हुआ।

तोकुगावा अर्थव्यवस्था वैसे तो 19वीं शताब्दी के प्रारंभ में भी प्रमुख रूप से खेतिहर थी, फिर भी इस समय तक इसमें बदलाव आ चुका था। 1800 में आबादी तीन करोड़ और 3 करोड़ 30 लाख के बीच कहीं थी और इसमें धीरे-धीरे वृद्धि हो रही थी। इस आबादी का 85 प्रतिशत हिस्सा गांवों में रहता था, लेकिन इदो, ओसाका और क्योटो जैसे शहरों की आबादी 20 लाख से भी ऊपर थी जबकि महली कसबों में 10,000 से 100,000 के बीच लोग रहते थे। इस तरह जापान एक साधारण खेतिहर समाज भर नहीं था। शहरीकरण से व्यापार और वाणिज्य को बढ़ावा मिला था। इन कार्यों को करने के लिये कुछ संस्थाएं भी बन गयी। **तोकुगावा** जापान की वाणिज्यि राजधानी ओसाका और शहर के व्यापारी संघों (दस विनिमय केन्द्र या **ज्यूनिन योगी**) को गवर्नरी का संरक्षण प्राप्त था। इन विशेषाधिकारों के बूते पर यहां चावल पर कर लगाने, पैसा भुनाने और ऋण देने के काम होते थे। अर्थव्यवस्था के वाणिज्यिक हो जाने से **तोकुगावा** पर दबाव पड़ा लेकिन बढ़ते जा रहे वित्तीय घाटों के लिये उनके नुस्खे का आधार कन्फ्यूशियस की सूक्ति ही बनी रहीं कि फजूलखर्ची वाली जीवन शैली और उपभोग पर रोक लगाओ। चावल का उत्पादन धीरे-धीरे बढ़ा और क्योंकि चावल परंपरा से कर का आधार था इसलिए करों में होने वाली कोई भी वृद्धि किसानों के लिए दूसरी अधिक मुनाफे वाली फसले उगाने का कारण बनती थी।

ग्रामीण अर्थव्यवस्था का चरित्र तेजी से बदल रहा था और 19वीं शताब्दी आते-आते क्षेत्रीय विशेषज्ञता कई किस्म की आर्थिक गतिविधियों को जन्म दे चुकी थी। मध्य और दक्षिण होंशु में वाणिज्यिक गतिविधि का बहुत अधिक प्रसार हो गया था और कई गांव कपास, तिलहन आदि उगाने के विशेषज्ञ हो गये थे। इदो के आसपास के क्षेत्र में कोई एक चौथाई ग्रामीण आबादी अब तक वाणिज्यि और दस्तकारी के क्षेत्र में रोजगार पा चुकी थी। शहर कपड़ा रोगन और बर्तनों के उत्पादन केन्द्र थे। लेकिन इनके ग्रामीण क्षेत्रों में जाने के साथ शहर वाणिज्यिक और प्रशासनिक केन्द्र बन गये और उनमें ग्रामीण क्षेत्रों से अनाधिकृत लोगों का आना जारी रहा।

संपदा के नये स्रोतों को सफलतापूर्वक संभालने में तोकुगावा बकुफु की असमर्थता के कारण एक अत्यधिक स्थिर कर आधार और अर्थव्यवस्था के वाणिज्यिक हो जाने का परिणाम यह हुआ कि **शोगुन** और **दाइम्यो** दोनों के लिए वित्तीय समस्यायें खड़ी हो गयीं और उनके **सैमुराई** सेवकों के लिए भी। उदाहरण के लिए 1830 में सत्सुमा के राज्य पर इसके वार्षिक राजस्व का तैंतीस'गुना ऋण था और 1840 तक चोशु पर उसके वार्षिक राजस्व का तेईस गुना ऋण हो चुका था। इस वित्तीय गिरावट का असर **सैमुराई** पर पड़ा जिनकी आमदनी 17वीं शताब्दी में भी बहुत कम थी और जिनके सामने बढ़ती कीमतों और अपनी मांगों को पूरा करने की समस्या थी।

बकुफु ने इन समस्याओं से निपटने के लिए कई कदम उठाये थे लेकिन उनके सुधार के प्रयास समस्या की प्रकृति को समझ नहीं पाये। 1705 में बकुफु ने अमीर और शक्तिशाली योद्धाओं जैसे सौदागरों की संपदा को जब्त कर लिया था। लेकिन इससे कोई लाभ नहीं हुआ। 1720 के दशक में **तोकुगावा योशिमुने** (1684-1757) ने वित्तीय और प्रशासनिक व्यवस्था को सुधारने के लिए कदम उठाये जिसमें उसने सौदागरों को लाइसैंस (व्यापार की औपचारिक अनुमति) दे दिये, लेकिन उसने उपभोग और धन वितरण को कम करने के परंपरागत नुस्खे का भी इस्तेमाल किया। परंपरा से हट कर उपाय बकुफु के अधिकारी तामुना ओकित्सुगु (1719-1788) ने किये। उसने वाणिज्य को बढ़ावा देने और उस पर कर लगाकर सरकारी राजस्व बढ़ाने के प्रयास किये, लेकिन ये प्रयास सफल नहीं हुए और उसे उसके पद से हटा दिया गया। उसके उत्तराधिकारी मत्सुदाइरा सदानोबु (1758-1829) ने योशिमुने द्वारा उठाये गये कदमों को दोहराने का प्रयास किया और 1841 में मिजुनो तादाकुनी ने तो सरकारी अनुमोदन वाले व्यापार अधिकारों को भी समाप्त कर दिया। इन उपायों ने पहले की गंभीर स्थिति को बस जटिल करने और गड़बड़ाने का ही काम किया और उन्हें वापस लेना पड़ा।

एक ओर तो प्रभावी और उपयुक्त नीतियों को लागू करने की बकुफु की असमर्थता थी और दूसरी ओर उत्पादकों और स्थानीय सौदागरों के बीच अनुधिकृत व्यापार में बढ़ोतरी हो रही थी। राज्य अपनी स्वयं की वित्तीय कठिनाइयों से उबरने के लिए इस व्यापार को स्वीकार करने या उसमें सक्रिय सहयोग करने को भी बाध्य थे। उदाहरण के लिए चोशु में 1840 में कुल गैर खेतिहर आमदनी शुद्ध खेतिहर आमदनी के बराबर

ही थी। लेकिन खेतिहर आमदनी पर तो 39 प्रतिशत कर लगाया गया था। 1840 तक होंशू और शिकोकू के वाणिज्य क्षेत्रों में ग्रामीण लोग एक नकदी अर्थव्यवस्था से दृढ़ता से जुड़ चुके थे।

9.2.3 तनाव और द्वंद्व

नकदी अर्थव्यवस्था का विकास होने और उसके परिणामस्वरूप सामाजिक संबंधों में होने वाले बदलावों ने तनावों और द्वंद्वों को जन्म दिया। **सैमुराई** के भीतर विभाजनों के कारण सामान्य हितों की स्थिति नहीं बन सकी। सौदागर भी एक जुट नहीं थे बल्कि उनमें भी हितों को लेकर विभाजन था। बुकुफु के कृपापात्र **ओसा** के सौदागर **तोकुगावा** के ढांचे से निकट से संबद्ध थे और जब इसका पतन हुआ तो वे भी समाप्त हो गये। बस एक मित्सुई घराना बचा और वह भी अपने संस्थापक की दूरदर्शिता के कारण।

ग्रामीण सौदागरों ने एक गतिशील भूमिका निभानी शुरू कर दी थी, उन्हें विशेषाधिकारों के मुनाफे नहीं दिए गए और बदलाव की आवश्यकता के प्रति उनकी प्रतिक्रिया अनुकूल रही। शहरों की तरह ग्रामीण क्षेत्रों में भी आर्थिक बदलावों ने सामाजिक संरचना को गड़बड़ा दिया और अव्यवस्था की स्थितियां बारंबार और अधिकाधिक हिंसक होने लगी। 1780 और 1830 के दशकों में अकाल, कीमतों में वृद्धि या अत्यधिक कर लगाने से किसानों में विरोध भड़का। किसान वर्ग पर **तोकुगावा** शांति को ताकत के साथ लागू किया गया और 1637 में शिमाबारा के विद्रोह को अत्यंत कड़ाई के साथ दबाया जा चुका था। बीच के वर्षों में इन विरोधों ने सामूहिक निवेदनों से बढ़ कर हिंसक कार्यवाहियों का रूप ले लिया। ये विरोध कई गांवों में फैल गए और इनमें हजारों ने भाग लिया।

विद्वानों की गणना के अनुसार 17वीं शताब्दी में किसान विद्रोहों का औसत एक या दो प्रति वर्ष था जबकि 1790 के बाद उनका औसत प्रति वर्ष छः से ऊपर पहुंच गया था। शुरुआत की किसानी कार्यवाहियां ग्रामीण एकजुटता के रूप में और व्यापक तौर पर शांतिपूर्ण थी और उनका संबंध करों में कटौती करवाने से था। लेकिन बाद के वर्षों की किसानी कार्यवाहियां अक्सर गांव के सयानों की सलाह के खिलाफ हुईं। ये कार्यवाहियां हिंसक थी और अक्सर इनमें संपत्ति को नष्ट किया गया। कई बार तो किसानी विरोधों का चरित्र सहस्राब्दिक रहा। इस तरह उदाहरण के लिए शहरी केन्द्रों में भी विरोध **तोकुगावा** के अंतिम वर्षों में बढ़ गए। इनमें से सबसे प्रतिनिधि विरोधों को **योनाओशी** (विश्व नवीनीकरण) कहा गया। इन विरोधों की प्रेरणा लोक परंपराओं से ली गयी और इनका उद्देश्य सदाचारिता की फिर से स्थापना करना था। ग्रामीण अशांति आर्थिक बदलावों की भी देन थी और बढ़ती शिक्षा और जागरूकता की देन भी।

9.2.4 शिक्षा विद्वान और विचार

पूर्व आधुनिक काल के आंकड़े बहुत विश्वसनीय तो नहीं हैं लेकिन यह कहा जा सकता है कि अधिकांश पूर्व-औद्योगिक समाजों की तुलना में जापान में शिक्षा का स्तर ऊंचा था। तैराकोया या मंदिर स्कूलों से लेकर **दाइम्यो** और **बकुफु** के प्रायोजन वाले स्कूलों और निजी विद्यापीठों तक विभिन्न स्कूलों ने जनता का एक पढ़ा-लिखा वर्ग बनाया। शहरों में साक्षरता का प्रसार प्रकाशन उद्योग की विकसित स्थिति और कसबाइयों की शिक्षा और सांस्कृतिक जीवंतता का प्रमाण है।

तोकुगावा समाज के आदर्शों और मूल्यों पर सवाल उठाने ने भी तेजी पकड़ी और इसे अनेक स्रोतों से प्रेरणा मिली। चीनी ज्ञान की श्रेष्ठता पर जो सवाल उठे उससे विद्वानों को जापानी संस्कृति और सभ्यता के आधार की खोज उस अतीत में करनी पड़ी जब वह चीनी मूल्यों से बची हुई फल-फूल रही थी। मोतूरी नोरीनागा ने मुरासाकी शिकिबू के क्लासिकी हेई उपन्यास, "**मेजी** की कथा" के अध्ययन के माध्यम से जापानी संस्कृति के असली केन्द्र का पता लगाने की कोशिश की। उसके अनुसार जापानी संस्कृति का केंद्र किसी दैवीय रूप से अवतरित सम्राट में, **शिंतो कामी** या देवताओं में और तार्किकता पर भावना की प्रमुखता में था। राष्ट्रीय ज्ञान पंथ की श्रेणी में रखे गये इन विचारों ने जापानी संस्कृति और राजनीति के केन्द्र के रूप में साम्राज्यिक संस्था पर जोर दिया। इस तरह सूर्य देवी का प्रत्यक्ष वंशज जापान की भूमि देवीय थी और वहां का सम्राट एक जीता-जागता देवता था और इसलिए जापान की तुलना किसी और देश से नहीं की जा सकती। मोतूरी नोरीनागा के विचारों को हिराता अत्सुताने (1776-1843) ने आगे बढ़ाया। हिराता चीनी ज्ञान का घोर आलोचक था।

इन विचारों के समानांतर मितो संप्रदाय के गिर्द होने वाला ऐतिहासिक विद्वता का विकास था। मितों की **हान तोकुगावा** की एक सहवर्ती शाखा थी और तोकुगावा घराने को उत्तराधिकारी दे सकती थी। **हान** ने जापान के एक इतिहास (दाई निहोनशी) को प्रयोजित किया और इस इतिहास में भी सम्राट की भूमिका पर जोर दिया गया

तोकुगावा बकुफु ने जापान को अंतर्राष्ट्रीय संपर्क से वास्तव में काट दिया था लेकिन उन्होंने डच लोगों को

दोशिमा में एक छोटे व्यापारिक केंद्र को लिये रहने की अनुमति दे दी। दोशिमा नागासाकी से हट कर एक मानव-निर्मित द्वीप था। डचों के यहां रुकने से यह द्वीप पश्चिमी ज्ञान का वातायान बन गया। जापानियों में उच्च विद्वानों (रंगाकुशा) का एक गुट उभरा। इन जापानियों को डच विद्वान इसलिए कहा गया क्योंकि उन्होंने डच भाषा का अध्ययन किया और उसके माध्यम से चिकित्सा; धातु विज्ञान, किलेबंदी और दूसरे व्यावहारिक विषयों पर कई पुस्तकों का अनुवाद किया। इन विद्वानों ने एक महत्वपूर्ण और आलोचनात्मक धारा बनायी जिसने **तोकुगावा** काल के समापन वर्षों में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। चिकित्सा शास्त्र का अध्ययन करने वाले सुगिता गेनवाकु (1733-1817) ने चिकित्सा शास्त्र पर पश्चिमी पुस्तकों के अपने ऊपर प्रभाव के बारे में लिखा। 1771 में उसने एक मनुष्य के शरीर की चीरफाड़ में हिस्सा लिया। यह चीरफाड़ निषेध के कारण गोपनीय ढंग से की गयी थी। इस चीरफाड़ में उसने पाया कि शरीर विज्ञान पर डच पुस्तकें अपने विवरण में पूरी तौर पर सही थीं और वह ''पश्चिम के ज्ञान और पूर्व के ज्ञान के बीच के इस बड़े अंतर'' से बहुत प्रभावित हुआ। होंडा तोशियाकी (1744-1821) जैसे अन्य विद्वानों ने आर्थिक विकास और विदेशी विस्तार की वकालत की और काइहो सेर्यो (1755-1817) ने सरकार से व्यापार और वाणिज्य में लगने का आग्रह किया। ये विचार उन्होंने पश्चिमी कृतियों को पढ़ कर और पश्चिमी समाजों का अध्ययन कर पाये थे।

अठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दी में प्रचलित नए विचारों का एक नया अंग यह जागरूकता थी कि राज्य को चाहिए कि वह एक नए और दृढ़तर जापान की रचना के लिए प्रशासनिक, उद्यमी और सैनिक कौशलों को मिला दे। साम्राज्यिक (शाही) संस्था के केन्द्रीय महत्व को भी बताया गया। ये धारायें **बकुफु** की राजनीतिक आलोचना बढ़ाने पर एक साथ आ गयीं। **बकुफु** अब उन पश्चिमी ताकतों से निपटने में और भी असमर्थ था जो यह मांग कर रही थीं कि जापान अपने द्वार खोल दे और व्यापार और राजनीतिक संबंधों के लिए स्वतंत्र संपर्क की छूट दे।

डच विद्वानों के ज्ञान का उपयोग महत्वपूर्ण व्यक्तियों ने बदलती स्थिति का विश्लेषण करने में किया। वातानाबे कजान (1793-1841) ऐसे एक प्रयास का प्रतीक है। तावारा के राज्य का एक सेवक वातानावे, एक योग्य और बुद्धिमान व्यक्ति था जिसने यह देखा कि पश्चिमी राष्ट्रों की शक्ति चीजों के अध्ययन विज्ञान-बोध, और घटनाओं की अग्रगामी गति में'' निहित थी। पश्चिमी समाजों में विज्ञान ''ज्ञान की अन्य तीन शाखाओं-धर्म और नीति, शासन और चिकित्सा-की सहायता के लिए और उस आधार का विस्तार करने के लिए था जिसका आधार वे विभिन्न कलाएं और तकनीकें हैं जो उन पर आश्रित हैं''। कजान को तो गिरफ्तार कर लिया गया और उसने बाद में आत्महत्या भी कर ली, लेकिन दूसरे लोग उसी तरह का काम करते रहे। ओगाता कोआन (1810-1863) ने 1838 में ओसाका में एक स्कूल खोला जिसमें डच ज्ञान की दीक्षा दी जाती थी। इस स्कूल के कई विद्यार्थियों ने आने वाले समय में मेजी पुर्नस्थापना में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभायी।

आईजावा सेशीसाई का **शिनरोन** या प्रबन्ध 1825 में प्रकाश में आया। उत्तर में रूसियों की बढ़त के प्रति सजग आईजावा (1781-1863) ने देखा कि पश्चिमी खतरे से निपटने के लिए जो रणनीति कारगर हो सकती थी उसके लिए सैनिक शक्ति की और सांस्कृतिक पुनर्निर्माण की भी आवश्यकता थी। पश्चिमी ताकतें ईसाई धर्म और अनिवार्य सैन्य भर्ती का इस्तेमाल करती थीं, इसलिए जापान के लिए अपने हथियारों को आधुनिक बनाना और अपने **कोकुताई** या राष्ट्रीय मर्म को फिर से जगाना अत्यंत आवश्यक था। उसने लिखा: ''सूर्य हमारी दैवीय भूमि पर उगता है, और आदिम ऊर्जा का मूल यही है। महान सूर्य के वारिस अनादिकाल से शाही सिंहासन पर आसीन हैं''। इस तरह आईजावा विभिन्न परंपराओं का सहारा लेकर एक नया कार्यक्रम देख रहा था जिससे पश्चिमी खतरे से बनी चुनौतियों का सामना किया जा सके। वह पश्चिमी ज्ञान का इस्तेमाल जापान और जापानी मूल्यों की श्रेष्ठता को फिर से व्यक्त करने के लिए कर रहा था।

जापानी संस्कृति की शुद्धता को फिर से व्यक्त करने और कभी-कभी इन देशज अवधारणाओं को सुदृढ़ करने के लिए पश्चिमी प्रौद्योगिकी को शामिल करने का प्रयास करने वाली साम्राज्यिक (शाही) संस्था से प्रेरित राजभक्ति के आदर्शों को आगे दूसरी बौद्धिक धाराओं ने भी मजबूत किया। चीनी दार्शनिक बांग यांग मिंग, या ओयोमे, के संप्रदाय में यह तर्क दिया गया था कि पारंपरिक तर्क कार्यवाही के लिए निर्देश के रूप में सहायक नहीं थे, इसलिए व्यक्ति के लिए आवश्यक था कि वह अपने अंदर इनकी तलाश करे और उसी के अनुसार आचरण करे। इन अवधारणाओं से प्रेरणा लेकर एक निचले स्तर के अधिकारी, ओशियो हेडाचीरो, ने अपनी नौकरी छोड़ दी और 1837 में एक विद्रोह का नेतृत्व किया।

....

....

....

....

....

....

....

....

बौद्धिक बदलाव लाने में रंगाकुशा (डच विद्वानों) ने क्या भूमिका निभायी? लगभग दस पंक्तियों में उत्तर दें।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

3) निम्नलिखित वक्तव्यों में से कौन से सही (√) हैं और कौन से गलत (×) निशान लगायें।
   i) **शोगुन** को महत्वपूर्ण मामलों पर कोई अधिकार नहीं था।
   ii) विदेशी दबावों ने जापान के आंतरिक संकट को और गंभीर कर दिया।
   iii) वित्तीय घाटों से उबरने के **तोकुगावा** के तरीके कन्फ्यूशियस की सूक्ति पर आधारित थे।
   iv) बकुफु के सुधार कारगर रहे।
   v) किसानी विरोध हिंसक हो रहे थे।

9.3 बाहरी संकट का दौर

तोकुगावा के बकुफु की शक्ति और वैधता को अंदर ही अंदर क्षति पहुंचाने वाली दीर्घकालिक आंतरिक शक्तियों को उभरते बाहरी संकट ने और भी मजबूत कर दिया था। (जैसा आपने इकाई 8 में देखा) जापान बाहरी शक्तियों के आकर्षण का केंद्र बन रहा था। साइबेरिया के पार विस्तार करते हुए रूस ने जापान के उत्तरी भागों को टटोलना शुरू कर दिया था। अमेरिका ऐसे बंदरगाहों की तलाश में था जहां वह चीन जाने वाले अपने तेज गति के (क्लिपर) जहाजों के लिए ईंधन और अन्य सामग्री ले सके। इंग्लैंड और फ्रांस भी इस क्षेत्र में प्रमुख खिलाड़ी थे और सभी जापान से संपर्क में रुचि रखते थे।

विदेशी दबाव के प्रति जापान की प्रतिक्रिया और विदेश नीति के प्रति उसके रवैये को पुराने समय से ही दो विचारों में बांटा गया है :

1) **जोई**, अर्थात् विदेशियों को निकाल बाहर करो। इसे एक विवेकहीन प्रतिक्रिया के रूप में देखा जाता है जिसकी वकालत अनाड़ी देशभक्त करते थे। **जोई** एक सीमित युद्ध के तर्क की वकालत करता है जिसमें बर्बरों को खदेड़ कर देश में फिर से जीवन का संचार किया जाये। यह इतना आदर्शवादी

विचार भी नहीं था क्योंकि दुनिया में उस समय तक पूर्ण युद्ध के विचार पर चिंतन नहीं किया गया था।

2) **काईकोकू,** अर्थात् खुला देश का विचार। इस विचार को कई तरीकों से पेश किया गया। लेकिन सभी का तर्क यह था कि जापान पश्चिमी ताकतों के खतरे से निपटने की स्थिति में कतई नहीं था। इसलिए उसे अपनी अखंडता की रक्षा के लिए समय की आवश्यकता थी।

बकुफु के समापन वर्षों के इतिहास को दो स्थिर स्थितियों के आपस में टकराने के काल के रूप में न लेकर अगर इन्हें उस रूप में लिया जाये जिसके जरिये विचारक और नीति निर्माता कुछ सामाजिक विचारों को साकार करने का प्रयास कर रहे थे तो यह कहीं अधिक लाभकर होगा। **सकोकू,** अर्थात् बंद देश के विचार का आधार **तोकुगावा** की महान शांति, एक हस्तक्षेप न करने वाला सम्राट और सीमित विदेशी संपर्क थे। इस विचार की जगह 1853 और 1868 के बीच धीरे-धीरे **काईकोकू** अर्थात् खुला देश, के विचार ने ले ली जिसका आधार एक सक्रिय सम्राट और समान सांस्कृतिक और नैतिक मूल्यों से एकताबद्ध राष्ट्र और सैनिक दृष्टि से मजबूत व्यवस्था बनाने के लिए पश्चिम के ज्ञान का उपयोग था। एक विचार से दूसरे विचार की ओर इस विचलन को उन बौद्धिक और आर्थिक बदलावों का समर्थन प्राप्त था जिसने विदेशी संबंधों के मसले में जनता की भागीदारी के स्तर को बढ़ाया।

सन् 1853 और उसके बाद के उस काल को जब कमोडोर पेरी ने जापान की धरती पर कदम रखा तीन उप-कालों में बांटा जा सकता है:

9.3.1 1853-1858 का दौर

इस दौर में बकुफु ने बंदरगाहों को खोलने की विदेशी मांगों को कम से कम करने का प्रयास किया। बकुफु अधिकारी, आबे मसाहीरो, ने तर्क दिया कि पेरी की संधि की मांगों को अस्वीकार करने से युद्ध का खतरा बनेगा, जबकि इसे स्वीकार करने से उन्हें इतनी मोहलत मिल जायेगी कि वे अपने आपको मजबूत कर लें। बकुफु की दृष्टि में असल खतरा व्यापार को लेकर नहीं था बल्कि सामाजिक अव्यवस्था का डर था। विदेशी घुसपैठ राजधानी इदो को, और विशेषतौर परं क्योटो की शाही राजधानी को खतरे में डालने वाली थी। जैसा कि एक बकुफु अधिकारी ने लिखा, यह तर्क देते हुए कि विदेशियों को "शाही महल, पवित्र स्थलों और निजी जागीरों" से दूर रखने के लिए योकोहामा को खोल दिया जाना चाहिए जिससे कम से कम रियायतें देकर स्वाभाविक व्यवस्था की रक्षा की जा सके।

बकुफु के मुख्य अधिकारी, होता मासायोशी ने **काईकोकू** अर्थात् खुले देश के विचार को आगे रखा। उसने तर्क किया कि नयी स्थितियों में दूसरे देशों के साथ व्यापार और मैत्री संबंध महत्वपूर्ण थे, और आवश्यक भी। जापान के लिए आवश्यक था कि वह अपनी पृथकता की नीति पर फिर से विचार करे क्योंकि "सैनिक शक्ति हमेशा राष्ट्रीय संपदा से आती है और देश को संपन्न करने के साधन मुख्य तौर पर व्यापार और वाणिज्य में मिलते हैं"। यह शासन तंत्र के लिए एक नया तर्क था, क्योंकि अभी तक तो परंपरा से चले आ रहे ज्ञान ने केवल कृषि को ही संपदा का मूल माना था और सौदागरों पर नाक-भौं सिकोड़ी थी।

होता एक नयी पेशकश कर रहा था। लेकिन वह अभी भी विदेशियों को दूर रखने के पुराने स्वप्न से बंधा था। उसकी पेशकश यह थी कि जापानी बाहर निकल कर इस संपदा को हासिल करें लेकिन इस तरह के तर्कों में अभी भी विदेशियों के लिए जापान में आवास के अधिकार के लिए कोई जगह नहीं थी।

बकुफु ने 1858 में संधियां कीं जिनमें योकोहामा में व्यापार की अनुमति दी गई और 1859 से इदो में विदेशियों को आवास की अनुमति दी गयी। इन कार्यवाहियों से विरोधी आंदोलनों को बढ़ावा मिला और "सम्राट का आदर करो, बर्बरों को निकाल बाहर करो" (सोन्नो जोई) आंदोलन ने, विशेष तौर पर उस समय जोर पकड़ लिया जब एक राजभक्त ने एक बकुफु अधिकारी ली नाओसूके की हत्या कर दी।

9.3.2 1860-64 का दौर

सन् 1860 के दौरान और 1863 में सम्राट को फिर से स्थापित करने का एक असफल प्रयास हुआ। इस तेजी से बदलते राजनीतिक भागीदारी के आधार को व्यापक करने के और भी प्रयास हुए। जिन दाइम्यो को सत्ता से और निर्णय लेने वाली परिषदों से बाहर रखा गया था, उन्होंने **बकुफु** की कमजोरी का उपयोग कर अपनी भूमिका और शक्ति को बढ़ाने की कोशिश की। इस तरह की एक कोशिश दरबार और **शोगुन** (कोबुगत्ताई) की दोस्ती थी। इसका उद्देश्य सामंतों और **सैमुराई** के उच्च्य स्तरीय सदस्यों को एक साथ

लाकर राष्ट्रीय एकता के लिए साथ-साथ काम करना था। यह प्रयास भी असफल ही रहा, लेकिन गृह युद्ध का खतरा टल गया। फिलहाल यह प्रश्न राजनीतिक पात्रों के दिमाग में हर समय बना हुआ था कि विदेशी आंतरिक फूट का लाभ उठायेंगे। 1860 के दशक में भी विदेशियों को क्योटो की शाही राजधानी के आसपास के क्षेत्र (**किनाई**) से बाहर ही रखा गया और इसकी प्रतिरक्षा के लिए कदम उठाये गये।

सन् 1864 में **बकुफु** ने **किनाई** में विदेशियों के प्रवेश देने के बजाय उन्हें हरजाना देने को ही सहमति प्रदान की और 1865 में दरबार ने संधियों का अनुमोदन तो कर दिया, लेकिन ह्योगो में विदेशियों को प्रवेश की अनुमति देने से इंकार कर दिया, जबकि संधि में इस पर सहमति हुई थी। **बकुफु** को इस प्रावधान के एवज में एक विनाशकारी शुल्क दर स्वीकार करनी पड़ी।

चोशु और सत्सुमा के **हान** पर हुई बमबारी (देखिये खंड 2 इकाई 8) ने एक स्पष्ट सबक दिया जिसमें विदेशियों को जबरन निकालने और उन्हें सीमित रियायतें देने, इन दोनों ही नीतियों की निरर्थकता सामने आ गई। 1865 तक यह स्पष्ट हो चुका था कि **सकोकू** या बंद देश चल नहीं सकता।

9.3.3 1865-1868 का दौर

यह काल एक खुले देश की नीति की विजय और नयी व्यवस्था को स्वीकारने के लिए उल्लेखनीय है। बकुफु ने 1867 में लंदन और पेरिस में सरकारी दूत भेजे, और उससे भी पहले एक अधिकारी इकेदा नागासाकी ने यूरोप का दौरा करने के बाद लिखा कि "राष्ट्रीय स्वाधीनता की नींव रखने के लिए यह मूल बात है कि जापान के भीतर राष्ट्रीय एकता हासिल की जाये"। उसने सलाह दी कि यह आवश्यक था कि जापानी संधियां करें और यात्रा करें, जानकारी एकत्र करें और पश्चिमी देशों का अध्ययन करें। इस बदली स्थिति में, "शोगुन" योशिनोबू यह लिख सका : "अगर हम, ऐसे समय में, केवल पुरानी पड़ चुकी रीतियों से चिपटे रहते हैं, और सभी देशों में आम अंतर्राष्ट्रीय संबंधों से बच कर रहते हैं तो, हमारा व्यवहार स्वाभाविक व्यवस्था के प्रतिकूल होगा"। ऐसे वक्तव्य इससे पहले के समय में नहीं दिये जा सकते थे। उनमें जापानियों के बौद्धिक बदलाव का स्पष्ट संकेत मिलता है। बेशक उनके विचार परिस्थितियों के दबाव में आकर बदले थे, लेकिन जो चुनाव उन्होंने किया वह एक नयी स्थिति के प्रति उनकी रचनात्मक प्रतिक्रिया का एक अंग था।

तोकुगावा "बकुफु" के अंतिम दशक में एक नये तरह के संबंध उभरते दिखायी दिये। सत्सुमा और चोशु इंग्लैंड के और निकट आ गये थे और "बुकुफु" की फ्रांस के साथ दोस्ती और बढ़ गयी थी। यह अपने आप में संभावी तौर पर एक खतरनाक स्वरूप था क्योंकि ये साम्राज्यवादी ताकतें अपने कृपापात्र मित्रों का समर्थन करके गृह युद्ध की स्थिति पैदा कर सकती थीं। इस खतरे को भांप लिया गया और स्थिति बिगड़ने नहीं पायी क्योंकि सम्राट की बहाली से एक केंद्रीकृत नौकरशाही राज्य सामने आया।

9.4 मेजी पुर्नस्थापना

सन् 1868 में "बकुफु से सम्राट के हाथों में सत्ता की वापसी मेजी पुर्नस्थापना की विशेष घटना थी। सम्राट को मेजी या प्रबुद्ध सरकार का मरणोपरांत नाम दिया गया और इसका इस्तेमाल 1868 से 1912 तक के उसके दौर के लिए किया जाता रहा। 1868 में सत्ता का बकुफु से सम्राट को वापिस मिलना मेजी पुर्नस्थापना की ओर संकेत देता है। सम्राट को मृत्योपरांत मेजी या प्रबुद्ध सरकार का नाम दिया गया तथा इसे 1868 से 1912 तक के समय के लिए उपयोग किया जाता है। शाही आदेशपत्र के द्वारा जनवरी, 1868 में **तोकुगावा कीकी** का पदत्याग घोषित किया गया। यह **तोकुगावा** के लंबे शासन की औपचारिक समाप्ति की ओर संकेत करता है। अप्रैल में राजदरबार ने शपथ धोषणा पत्र जारी किया जिसमें नई सरकार की नीतियां निहित थीं। अक्टूबर 1868 में सम्राट मुत्सूहितो ने चीनी "चरित्रों" का चयन किया जिनका अर्थ "प्रबुद्ध" शासन या मेजी था तथा जिस नाम से उसका शासनकाल जाना जाता है।

पुर्नस्थापना या इशिन के नाम से यह घटना जानी जाती है। इसमें कुलीन वर्ग (अभिजात-वर्ग) के कुछ तबके तथा विशेष तौर पर सत्सुमा, चोशु, हिज्म तथा तोसा के **हान** ने भाग लिया उन **सैमुराई** तथा ग्रामीण समृद्ध तबकों ने भी इसको समर्थन दिया जिन्हें **तोकुगावा** तंत्र के प्रतिबंध खलते थे। ये गुट बकुफु की सत्ता में भागीदारी चाहते थे। जब विदेशी दबाव के फलस्वरूप बकुफु अपने को कायम रखने में असफल रहा तो इन गुटों ने राजनीति में हस्तक्षेप करके उसे प्रभावित करना चाहा। विदेशियों की संधि-बंदरगाहों को खोलने की मांग तथा बकुफु की दुविधा ने इन गुटों को शाही दरबार को समर्थन देने के लिए तथा **तोकुगावा** द्वारा सम्राट को सत्ता वापिस करने के लिए प्रोत्साहित किया। इस मांग का राजभक्तों ने भी समर्थन किया जो कि

सचमुच एक सक्रिय शाही दरबार चाहते थे। सत्सुमा तथा चोशु **हान,** जो कि अपने-अपने गुटों का नेतृत्व कर रही थीं, के बीच शुरू में कटु संबंध रहे परंतु बाद में इन दोनों ने मिलकर **तोकुगावा बकुफु** का तखता पलट दिया।

1854 में कंगादा की संधि पर हस्ताक्षर हुए तथा 1859 तक जापान के विदेशी संबंध असमान संधियों के आधार पर निर्धारित हो गए, जैसा कि चीन में भी हुआ। संधि बंदरगाहों को खोलने के दबाव (**अलामाशी, हाबोबाती, योहोहामा, बीगाता, कोबे**) ने ऐसे संकट को जन्म दिया जिसमें तोकुगावा के आलोचक एकजुट हो गए। उदाहरण के तौर पर **तोकुगावा** गुट के रूढ़िवादी जो कि संधियों से सहमत नहीं थे क्योतो के अभिजात वर्ग के साथ मिल गए तथा उन्होंने बकुफु को सुधारने की चेष्टा की। सत्सुमा तथा चोशु ने प्रमुख भूमिका निभाई क्योंकि वे ''बाहर के सामन्त'' थे (उन्हें 1600 में तोकुगावा हरा चुका था) तथा सत्ता में उनकी भागीदारी नहीं थी। उनके हान तोकुगावा क्षेत्रों से बहुत दूर थे तथा उनका इलाका सुसंहत था। इन **हान** में आंतरिक सुधार की कोशिश भी संभव हो सकी तथा वे उन ताकतों को भी जुटा पाए जो तोकुगावा का विरोध कर सकती थीं।

9.4.1 बहस

सन् 1868 की घटनाएं पुर्नस्थापना की ओर इशारा करती हैं या क्रांति की ओर? ये वे सवाल हैं जिनको लेकर विद्वानों में अभी भी बहस चल रही है। उदाहरण के लिए तेत्सुओ नाजीता लिखता है कि ''जापानी सम्राट के पास सत्ता का कोई विशिष्ट ढांचा नहीं था जिसकी'' बहाली होती, और इशिन (पुर्नस्थापना या बहाली) के बाद उसके साथ जो भी भव्य छवियां जुड़ीं वे हाल के इतिहास की विरासत नहीं, आधुनिक राज्य की वैचारिक संरचना का परिणाम थीं।'' 1867 और 1868 की घटनाएं महाप्रलय किस्म की घटनाएं नहीं थीं, और अगर केवल इसी दौर पर विचार किया जाए तो **तोकुगावा** से मेजी पुर्नस्थापना की ओर संक्रमण आसान और बहुत कम द्वंद्व वाला दिखायी देता है। लेकिन अगर इस पर 19वीं शताब्दी की शुरुआत से विचार किया जाये तो यह देखा ज़ा सकता है कि जो बदलाव लाये गये थे उन्होंने जापान को बहुत बदल डाला और एक नये राष्ट्र राज्य की रचना की। इस संक्रमण की प्रकृति के दृष्टिकोण को लेखकों और लेखकों के समय की चिंताओं ने प्रभावित किया है।

एक जाने-माने मेजी बुद्धिजीवी, तोकुनोमी सोहो, ने यह तर्क दिया था कि आधुनिक जापान की रचना में मदद मेजी नेताओं ने नहीं, बल्कि परिस्थितियों ने दी। इसकी दृष्टि में सामंतवादी जापान पहले ही उन ग्रामीण नेताओं के उदय के साथ कमजोर हो रहा था, जिनकी शक्ति का आधार एक उत्पादक और संपन्न अर्थव्यवस्था थी, लेकिन जिन्हें राजनीतिक सत्ता से वंचित रखा गया था। दूसरे बुद्धिजीवियों का तर्क था कि शाही राजभक्ति की ताकतें पुनरुत्थान के लिए जिम्मेवार थीं, इनमें अंतिम तोकुगावा शोगुन, योशिनोबू, भी शामिल हैं, जिसने 1915 में अपने संस्मरण लिखे।

9.4.2 मार्क्सवादी दृष्टिकोण

मेजी पुनरुत्थान का एक अत्यंत प्रभावी विश्लेषण 1920 के दशक में मार्क्सवादियों ने किया। उस समय आंतरिक दमन और एक आक्रमक विदेश नीति के कारण उन्हें आधुनिक जापानी राज्य की प्रकृति की फिर से छानबीन करनी पड़ी। विविध प्रकार की विस्तृत और विद्वतापूर्ण कृतियाँ प्रकाश में आयीं, और उनके दृष्टिकोणों को दो व्यापक कोटियों या श्रेणियों में रखा गया।

मजदूर-किसान गुट **(रोनो-हा)** पुर्नस्थापना को बुनियादी तौर पर एक बुर्जआ क्रांति के रूप में देखता था, जिसने सामंतवाद का खात्मा करके पूंजीवादी विकास का आधार तैयार किया।

दूसरे गुट का नाम **(कोज़ा)** उनके द्वारा लिखी गई श्रृंखलाओं या भाषणों पर पड़ा। कोज़ा गुट का तर्क था कि मेजी पुर्नस्थापना एक सफल पूँजीवादी क्रांति नही थी, बल्कि एक ऐसी क्रांति थी जिसने एक तानाशाही राज को स्थान दिया। इसका आधार ''सम्राट व्यवस्था'' थी और इस व्यवस्था की शक्ति उन सामंती संबंधों पर आधारित थी जो गांवों में अभी भी बने हुए थे।

मार्क्सवादियों के तर्क उनके राजनीतिक कार्यक्रमों से निकट से संबद्ध थे। सामंतवाद खत्म हो जाने की स्थिति में तो सम्राट से लड़ना आवश्यक नहीं था जिसके कारण पार्टी पर पाबंदी लग जाती, लेकिन सामंतवाद के महत्वपूर्ण बने रहने की स्थिति में उन्हें सम्राट व्यवस्था का विरोध करना पड़ता और इससे भी पार्टी पर पाबंदी लगा दी जाती।

एक प्रभावशाली जापानी विचारक, किता इक्की; ने पुर्नस्थापना को एक पुर्नस्थापना क्रांति के रूप में देखा

जिसमें प्रगतिशील तत्वों और अतीत से चले आ रहे प्रतिबंधों दोनों को मान्यता मिली। उसने अपनी कृति में अपने दृष्टिकोण को बहुत जोरदार ढंग से रखा। उसकी कृति पर उसके छपने के लगभग तुरंत बाद ही पाबंदी लगा दी गयी।

9.4.3 युद्धोत्तर बहस

युद्धोत्तर जापान में यह बहस जारी रही है। इ.एच. नार्मन ने अपनी मार्गदर्शक कृति में एक विवेचना दी जिसने अनेक विद्वानों को प्रभावित किया। नार्मन की दृष्टि में पुर्नस्थापना की स्थिति ''निम्न **सैमुराई**'' और ''सौदागरों'' के गठबंधन का काम था इस गठबंधन ने मेजी राज्य को बनाने में निर्णायक भूमिका निभायी और यह विदेश विस्तार और आंतरिक केंद्रीकरण जैसी विशेषताओं के विकास के लिए भी जिम्मेदार रहा। फिर भी, दूसरे विद्वानों को विस्तृत अध्ययन के बल पर इस सिद्धांत को प्रमाणित करना कठिन लगा है।

अल्बर्त क्रेग ने तर्क दिया है कि ''निम्न **सैमुराई**'' विश्लेषण के आधार पर अर्थहीन है, क्योंकि 'उच्च **सैमुराई**'' का प्रतिशत बहुत ही कम था और किसी भी आंदोलन में निम्न **सैमुराई** की भागीदारी एक बड़ी तादाद में होती है । अल्बर्त क्रेग की ही तरह चोशू के हान का अध्ययन करने वाले टॉमस ह्यूमर ने निम्न **सैमुराई** को उनकी आमदनी के आधार पर परिभाषित किया है और वह इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि उनमें साधारण नागरिक किस्म के ग्रामीण प्रकाशक शामिल थे। शिबाहारा ताकऊजी की दृष्टि में सामंत-विरोधी भावनाओं ने पुनरुत्थान आंदोलन के पीछे की प्रेरक शक्ति के रूप में काम किया। लेकिन, कॉनरैड टॉटमैन का तर्क है कि साधारण नागरिकों ने सभी पक्षों में भागीदारी की और सामंत-विरोधी को बकुफु-विरोधी के बराबर रखना संभव नहीं है।

जन असंतोष की भूमिका का विश्लेषण करना कठिन है। यह सही है कि जन-आंदोलन हुए, लेकिन जैसा कि एक अध्ययन से पता चलता है, उनमें से कई आंदोलन **तोकुगावा** क्षेत्रों में हुए, जो बुकुफु विरोधी राज्यों या क्षेत्रों की तुलना में कहीं अधिक संपन्न थे। सौदागर राजभक्ति आंदोलन के समर्थक थे, यह निष्कर्षात्मक तर्क देने से पहले यह आवश्यक होगा कि सौदागरों की भूमिका का भी सावधानीपूर्वक अध्ययन किया जाये।

मारियस जानसेन ने विदेशी हस्तक्षेप से बनने वाले असली खतरे पर सवाल उठाया है; उसका तर्क है कि सरकारें या तो अपना प्रभाव बढ़ाने में रुचि नहीं रखती थीं, या फिर इस स्थिति में नहीं थीं; फिर भी वह यह तो मानता ही है कि जापान ने विदेशी खतरे की जो परिकल्पना की उसने लोगों को कार्यवाही करने को उधत करने में एक महत्वपूर्ण शक्ति का काम किया। विशेष तौर पर विदेशी ऋण के भय ने इस दौर में और मेजी युग में भी एक निर्णायक भूमिका निभायी।

बहसें जारी रहेंगी और आवश्यकता इस बात की है कि हम सावधानीपूर्वक और विस्तृत अध्ययन के जरिये असली प्रक्रिया की अपनी समझ को और भी साफ करें। फिर भी, यह कहा जा सकता है कि बहस प्रमुख तौर पर तीन बिंदुओं के गिर्द घूमती है :

1) पहला यह कि मेजी इशिन का उदय पश्चिमी साम्राज्यवादी खतरे के विरुद्ध एक रक्षात्मक प्रतिक्रिया के रूप में हुआ।
2) दूसरा, वास्तविक द्वंद्व सामंतवादी शक्तियों और उभरती पूंजीवादी शक्तियों के बीच था और जिस मेजी राज्य का उदय हुआ वह इन दो तत्वों का मिश्रण था।
3) तीसरा, बहस निम्न **सैमुराई** की प्रकृति और भूमिका को लेकर जारी है।

कॉनरैड टॉटमैन ने तर्क दिया है कि मेजी पुर्नस्थापना का प्रमुख कारण **तोकुगावा** के बकुफु का आंतरिक रूप से ध्वस्त होना था और ऐसा लंबे समय तक पतन की स्थिति बने रहने के कारण हुआ क्योंकि निरंतर शांति और आर्थिक विकास ने जिन नयी शक्तियों को जन्म दिया उनके प्रति **तोकुगावा** सही प्रतिक्रिया नहीं दे पाया। टॉटमैन की दृष्टि में 1860 के दशक के प्रारम्भिक वर्षों के सोन्नाजोई और कोबुगत्ताई जैसे आंदोलन स्वैच्छिक थे; लेकिन उनका तर्क है कि ये आंदोलन देश को एकता के सूत्र में नहीं बांध पाये। उसके विश्लेषण में राष्ट्रीय राजनीतिक विचारों के महत्व पर जोर दिया गया है और इसीलिए वह क्षेत्रग्रस्त मामलों और मसलों को निर्णायक महत्व नहीं देता। राज्यों या क्षेत्रों का मसला महत्वपूर्ण तो था, लेकिन जिस किस्म का बदलाव लाया गया, उसमें वह कोई निर्णायक कारण नहीं था।

तोकुगावा कालीन जापान के फ्यूदाई दाइम्यो का अध्ययन करने वाले हैरल्ड बोलिटो का दृष्टिकोण इसके विपरीत है। उसका तर्क है कि **हान** की मजबूती और शक्ति को बढ़ाने वाले कमज़ोर **शोगुन** थे, केंद्रीय शक्ति का विकास नहीं हो पाया था। फिर क्षेत्रगत हित बकुफु के अंतिम वर्षों में निर्णायक शक्ति बन गये।

इन **हान** हितों को सम्राट के अधीन प्रतीकात्मक नेतृत्व मिल गया। सम्राट के नेतृत्व में **हानों** के इस गठबंधन के लिए बकुफु को चुनौती देना और अपनी राजनीतिक बदलाव की मांगों पर जोर देना संभव हो सका। कोबुगन्ताई आंदोलन इस गठबंधन द्वारा बकुफु को हटाने का मुख्य प्रयास था। सोन्नो-जोई आंदोलन एक राष्ट्रीय स्तर का (या राष्ट्रव्यापी) आंदोलन था जिसमें निम्न और मध्यम स्तर के **सैमुराई** ने एक साथ मिल कर बकुफु का विरोध किया।

जैसा कि पहले कहा गया है, टॉमस ह्यूबर ने चोशु के अपने अध्ययन में आंदोलन की वर्गीय प्रकृति पर ध्यान केंद्रित किया है जिसने मेजी पुर्नस्थापना की स्थिति लाने में मदद की। साम्राज्यवादी दबाव को महत्व देने के मामले में ह्यूबर की बोलितो से सहमति है, लेकिन वह बोलितों और टॉटमैन दोनों से असहमति व्यक्त करता है और यह तर्क देता है कि क्षेत्रगत चेतना और राष्ट्रीय चेतना दोनों ही बकुफु विरोधी आंदोलनों में निर्णायक नहीं थीं। चोशु में ईश्वर का प्रतिशोध नाम वाले ह्यूबर के इस आंदोलन के अध्ययन में यह बात सामने आती है कि वर्गीय चेतना और सामाजिक न्याय की इच्छा आंदोलन के पीछे की प्रमुख प्रेरक शक्ति थे। ढांचे को अंदर से सुधारने के बकुफु के प्रयासों का ह्यूबर ने जो अध्ययन प्रस्तुत किया वह कम आशाजनक है, उसकी दृष्टि में बकुफु बुनियादी तौर पर रूढ़िवादी था और उसमें बदलाव की क्षमता नहीं थी और इस ढांचे के भीतर सुधारवादियों की स्थिति बहुत गौण थी।

मेजी पुर्नस्थापना की घटनाओं की छानबीन जापान पर काम करने वाले विद्वानों ने की है, लेकिन दूसरे क्षेत्रों के बहुत कम विशेषज्ञों ने इस घटना को इस वृहत्तर ढांचे में रख कर देखने का प्रयास किया है कि समाजों ने किस तरह एक आधुनिक राज्य की ओर संक्रमण किया है। यह प्रक्रिया कठिन है और हमेशा सफल भी नहीं हुई है। मेक्सिको में 1910 में एक किसान क्रांति हुई जिसे दबा दिया गया, लेकिन वह कई दशक के पूंजीवादी विकास के बाद अभी भी एक अल्पविकसित देश बना हुआ है, दूसरी ओर तुर्की ने कमाल अतातुर्क के नेतृत्व में एक राष्ट्रीय बदलाव का काम हाथ में लिया, लेकिन वह भी विकास नहीं कर सका। ऐशिया में चीन ने 1911 में एक गणतांत्रिक क्रांति की और 1949 में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी सत्ता में आयी, लेकिन चीन भी उद्योगीकरण में सफल नहीं रहा है। इस तरह, जापान की मेजी पुर्नस्थापना इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि इसने एक गैर-उद्योगीकृत समाज को एक आधुनिक राष्ट्र राज्य में बदल दिया। इस घटना पर एक वृहत्तर ऐतिहासिक प्रक्रिया के अंग के रूप में विचार किये जाने की आवश्यकता है।

मेजी इशिन वह दौर था जब समाज को विप्लव में झोंक दिया गया था और विचार और संबंध अभी तक बाद के "कुलीनतंत्रिक राज्य" में घुलमिल नहीं पाये थे, और इसलिए उन हितों द्वारा कोई व्यवस्था थोपा जाना छानबीन के क्षेत्र को सीमित करता है और उस अनिवार्यता की ओर संकेत करता है जो जापान पर लिखी गयी ऐतिहासिक कृतियों में प्रकट होती है। तेस्तुओ नाजीता ने इस बदलाव को उस दृष्टि से देखा है जिस तरह ज्ञान और राजनीतिक अर्थव्यवस्था को समझा गया। **तोकुगावा** की चिंता के विषय थे "समाज को व्यवस्थित करना और लोगों को बचाना (कैसे साइमिन)" लेकिन मेजी के लिए मुख्य रुचि "संपन्न देश, सशक्त सेना "(फ्यूकोकू क्योहे) हो गयी। लोगों को "बचाने" से उन्हें "संघटित करने का यह बदलाव मेजी इशिन के साथ आया। यह प्रक्रिया एक अरसे तक चली और उसके पहले बहसें और टकराव हुए। जापान का बदलाव एकमत और सौहार्द के जरिये नहीं आया। जब हम इन सवालों पर विचार करते हैं तो जे. डब्ल्यू. हाल के इस दृष्टिकोण को स्वीकार करना कठिन हो जाता है कि "जापान ने ऐसी बहुत कम सामाजिक शत्रुता या राजनीतिक विचारधारा देखी जो कि फ्रांसीसी या रूसी क्रांतियों ने देखी .... मेजी न तो किसान क्रांति थी न बुर्जुआ वैसे गवर्नरी पर हमले का नेतृत्व करने वाले व्यक्तियों में किसान भी पाये गये थे और सौदागर भी।"

रूसी इतिहासकार ने लिखा है कि 1868-1873 के बीच 200 से अधिक किसान विद्रोह हुए; उसका तर्क है कि पुर्नस्थापना को एक "असफल क्रांति" के रूप में देखना कहीं बेहतर होगा। यह स्मरण रखना भी महत्वपूर्ण है कि जहाँ **तोकुगावा घराने** की हत्या नहीं की गयी और वह बरकरार रहा, वहीं तोबा और फ्यूशिमी बकुफु को नष्ट करने वाली लड़ाइयों में 120,000 सरकारी सैनिक शामिल थे, और 3,556 मारे गये और 3,804 घायल हुए, इसकी तुलना 1894-95 के चीन-जापान युद्ध में 5,417 हताहतों से कीजिए, तब आप यह समझ पायेंगे कि यह संघर्ष कितना बड़ा था।

मेजी पुर्नस्थापना की उथल-पुथल की छानबीन कई परिप्रेक्ष्यों में की गयी है। प्रभावशाली जापानी इतिहासकार, इरोकावा दाइकीपी ने "सभ्यीकरण" और "पश्चिमीकरण" के बीच टकराव पर जोर दिया है। उसका तर्क है कि महान नवीनीकरण (गोईशिन) कहलाने वाली मेजी पुर्नस्थापना में आम लोगों की आशाएं टूटीं और परंपरा से चली आ रही रीतियों में किये जाने वाले मनमाने बदलावों से उनका मोह भंग और गहरा हुआ; इस निराशा ने किसान विद्रोहों जैसे व्यवस्था-विरोधी संघर्षों को हवा दी, और वह मारूयामाक्यों और

तेनरिक्यो जैसे नये धर्मों की बढ़ी लोकप्रियता में भी प्रकट हुई। लोकतांत्रिक जन-संघर्षों पर इरोकावा के काम ने उसे जापानी इतिहास के एक प्रमुख विवेचक के रूप में स्थापित किया है।

आधुनिकता की मांगों और आम लोगों की जीवन-शैली के विनाश के बीच का तनाव पुर्नस्थापना के दौर में और उसके तुरंत बाद होने वाली हिंसक घटनाओं के पीछे की प्रेरक शक्ति थी।

निष्कर्ष के तौर पर इस बात पर जोर देने की आवश्यकता है कि जहाँ मेजी पुर्नस्थापना ने जापान के लिए एक नये युग की शुरुआत की वहीं जापान के सफल बदलाव का कारण केवल उसे मिलने वाली मोहलत नहीं थी। पश्चिमी साम्राज्यवादी ताकतों की रुचि निश्चित रूप से चीन के बड़े बाजार में थी और उन्हें जापान में कोई बड़ी संभावना नहीं दिखायी देती थी। इससे जापान को कई सुधार करने का अवसर मिला; लेकिन जापान इन सुधारों को सोच और लागू कर सका, और स्वयं को मिले अवसर का लाभ उठा सका, इसका कहीं बड़ा कारण उसकी आंतरिक मजबूती और स्वदेशी संस्थाएं थीं।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

2) मेजी पुर्नस्थापना पर मार्क्सवादी दृष्टिकोण पर पांच पंक्तियां लिखिए।

....

....

....

....

....

3) मेजी पुर्नस्थापना पर युद्धोत्तर बहस की पंद्रह पंक्तियों में विवेचना कीजिए।

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

....

9.5 सारांश

तोकुगावा का पतन नयी सामाजिक शक्तियों के निर्माण और इन शक्तियों से बनने वाले तनावों के कारण हुआ। **सैमुराई,** सौदागरों और किसानों को बढ़ती समस्याएं पेश आयीं, जिनमें से कुछ का कारण बढ़ती हुई उत्पादकता और संपन्नता थी। बकुफु के पास रचनात्मक तौर पर नयी चुनौतियों का सामना करने की सामर्थ्य नहीं थी। अर्थव्यवस्था में लंबे समय के बदलावों के साथ-साथ वे नयी बौद्धिक प्रवृत्तियाँ भी थीं जिन्होंने **तोकुगावा** की रूढ़िवादिता की जड़ें खोदीं। **बकुफु** ने इनमें से कुछ चुनौतियों का सामना किया होगा या धीरे-धीरे बदलाव आता, लेकिन साम्राज्यवादी दबावों ने इन समस्याओं को और भी गंभीर कर दिया। 19वीं शताब्दी के मध्य में पश्चिमी साम्राज्यवाद अपने शिखर पर रहा, और रूस, इंग्लैंड और फ्रांस विशेष तौर पर इस क्षेत्र में सक्रिय रहे। जापान इस जबरदस्त मारकाट से इसलिए बच गया क्योंकि इन ताकतों की चीन में अधिक रुचि थी। फिर भी इस बात पर ज़ोर देना ही चाहिए कि जापान के बदलाव की प्रक्रिया साम्राज्यवादी खतरे की स्थिति में चली और उसकी प्रतिक्रिया भी विशेष तरीकों से इसी खतरे के अनुकूल और इसी की दिशा में बनी। उपनिवेश बन जाने का भय, सामाजिक गड़बड़ी का भय और विदेशी ऋणों के कारण गुलाम बन जाने का भय भी संकट के इस विकृत बोध की पुष्टि करते हैं।

9.6 शब्दावली

सोन्नो-जोई "सम्राट का आदर करो और बर्बरों को निकाल बाहर करो" प्रत्यक्ष शाही राज की पुर्नस्थापना के इच्छुक गुटों का नारा।

कोकुताई "राष्ट्रीय राज्यतंत्र": एक पुराना विचार जिसका कई अवसरों पर यह भी अर्थ रहा कि जापान अन्य देशों से हट कर था क्योंकि इसका मूल दैवीय था और उस पर सूर्य देवी के सीधे वंशजों का राज था।

फ्यूदाई तोकुगावा से संबद्ध आनुवांशिक जागीरदार मांतहत **दाइम्यो** गुटों में बंटे हुए थे और दूसरा प्रमुख गुट बाहरी सामंत या तोज़ामा का था जिन्होंने शुरुआत में **तोकुगावा** का विरोध किया था जैसे सत्सुमा, चोशू आदि।

सकोकू बंद देश, इसका संबंध तोकुगावा की पृथकता की नीति से है, वैसे इस शब्द का इस्तेमाल केवल 19वीं शताब्दी में हुआ।

तेराकोया बौद्ध मंदिर के स्कूल जिनका संचालन पुरोहितों के हाथों में था।

9.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) आपका उत्तर उपभाग 9.2.2 पर आधारित होना चाहिए।
2) आपका उत्तर उपभाग 9.2.2 पर आधारित होना चाहिए।

3) (1) × (2) √ (3) √ (4) × (5) √

बोध प्रश्न 2

1) काईकोकू का मतलब खुला देश। आपका उत्तर भाग 9.3 पर आधारित होना चाहिए।
2) उपभाग 9.4.2 देखिए।
3) उपभाग 9.4.3 देखिए।